The Sameeksha Global: A Multidisciplinary Journal in Hindi
Vol. 4, Issue 1 – 2020
ISSN: 2581-401X

भारत का किसान आंदोलन और गांधी: एक अवलोकन

प्रकाश[1]

[1]*शोधार्थी, इतिहास विभाग, बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार।*

आधुनिक भारत का सबसे बड़ा आंदोलन स्वतंत्रता प्राप्ति का आंदोलन है और इसके सबसे बड़े नेता-महात्मा गांधी। भारत का स्वतंत्रता-आंदोलन अपने चरित्र में बहुआयामी और बहुरंगी था। यह एक राजनीतिक आंदोलन था, पर इस आंदोलन ने देश में कई सामाजिक आंदोलनों, किसान आंदोलनों, मजदूर आंदोलनों और महिला सशक्तिकरण के आंदोलनों को जन्म दिया और इन आंदोलनों की प्रक्रिया अभी भी निरंतर गतिशील बनी हुई है। यही कारण है कि भारतीय समाज के अंतर्गत बहुत कम समय में ही अतुलनीय बदलाव देखे गए हैं। गांधी आधुनिक भारत के प्रणेता माने जाते हैं। अंग्रेजों के भारत आगमन के पश्चात स्वतंत्रता आंदोलन के अलावा भी गांधी ने कई सामाजिक आंदोलनों का प्रतिनिधित्व किया और एक बड़े सामाजिक बदलाव में अपनी युगांतकारी भूमिका सुनिश्चित की। भारत में होने वाले कई बड़े किसान आंदोलनों का प्रतिनिधित्व गांधी ने किया। भारतीय राजनीति में कदम रखने के बाद उनका पहला आंदोलन किसान आंदोलन ही था, जो चंपारण-सत्याग्रह 1916-17 के नाम से प्रसिद्ध है। इसी आंदोलन से गांधी ने औपचारिक रूप से अपनी राजनीतिक यात्रा की शुरुआत की।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ की 60% आबादी कृषि पर आधारित है। भारत की कृषि-परंपरा बहुत लंबी रही है। बड़े दुख के साथ कहना पड़ता है कि हमारे यहाँ किसानों के शोषण और उन पर किए अत्याचारों की परंपरा भी बहुत लंबी रही है। आज़ादी के लगभग 70 साल बाद भी भारत में किसानों की स्थिति शोभनीय नहीं है। किसानों के आत्महत्या के बढ़ते आंकड़े बार-बार इसी बात की ओर इशारा करते हैं कि आखिर भारत के किसानों की हालत में कब सुधार आएगा।

किसानों के शोषण का एक बड़ा जीवंत दस्तावेज हमें अंग्रेजी शासन-व्यवस्था में दिखलाई पड़ता है। अंग्रेजों के आने के पश्चात उनके द्वारा ज़मींदारी-बंदोबस्त कायम करने के बाद किसानों पर जो जुल्म होना शुरू हुआ वह कमोवेश आज भी जारी है। अपनी ज़मीन होते हुए भी इन किसानों को जमींदारों का अत्याचार सहना पड़ता था। इसके बाद नील की खेती द्वारा भारत के किसानों पर आशातीत जुल्म ढाए गए। एक लंबे अंतराल के बाद किसानों में विद्रोह की भावना जाग उठी।

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

आंदोलनों का दौर शुरू हुआ। कई आंदोलन को दबा दिया गया, पर कई आंदोलनों ने एक बड़ा बदलाव लाया। स्वतंत्रता संग्राम के समय ऐसे कई किसान आंदोलन हुए जिसमें गांधी ने हिस्सा लिया और किसानों की आवाज़ बुलंद की। चंपारण, अवध और गुजरात के खेड़ा के किसान आंदोलनों का गांधी जी ने प्रतिनिधित्व किया। इन आंदोलनों के माध्यम से गांधी ने भारत के लोगों की सामाजिक-राजनीतिक चेतना को भी जागृत करने का काम किया।

भारत में किसान आंदोलन गांधी के पहले भी होते चले आ रहे थे। इनमें से संथाल विद्रोह(1855-56), बंगाल का नील विद्रोह(1859-60) और मराठा किसान विद्रोह(1875) का नाम उल्लेखनीय है। गाँधी ने किसान आंदोलन के चरित्र में मौलिक परिवर्तन लाया। हम पाते हैं कि गाँधी से पहले हुए तमाम किसान आंदोलनों में हिंसा मुख्य हथियार था। पर गाँधी ने किसान आंदोलनों का एक अलग धरातल पर नेतृत्व किया। इस प्रकार, यह ज़रूरी है कि गांधी के पहले हुए भारत के कुछ मुख्य किसान आंदोलनों के चरित्र और उसकी परिपाटी को समझ लेना आवश्यक है।

आधुनिक भारत की बात करें तो गांधी के राजनीति में पदार्पण से पहले मुख्यतः तीन बड़े किसान आंदोलन हुए। इनका चरित्र गाँधी के राजनीति में आने के बाद होने वाले किसान आंदोलनों से भिन्न था। संथालों का विद्रोह(1855-56), बंगाल का नील विद्रोह(1859-60) और मराठा किसान विद्रोह(1875)।

औपनिवेशिक भारत में अंग्रेजों के द्वारा लागू की गई भू-कर और अन्य आर्थिक नीतियों ने किसानों के शोषण का एक मजबूत आधार तैयार किया। ज़मींदारी बंदोबस्त लागू होने से किसान अपनी ही जमीनों से एक रूप में अजनबी हो गए थे। जमीने भले किसानों की थी, इन जमींदारों का कोई मालिकाना हक़ नहीं था, पर अंग्रेजों के द्वारा भू-कर वसूलने का जिम्मा इन्हें सौंप दिया गया था। इन जमींदारों के द्वारा भू-कर वसूलने की प्रक्रिया पीड़ादायक थी। ज़मींदारों ने किसानों से कर वसूलने में दोयम दर्जे का व्यवहार किया। ज़मींदारी व्यवस्था लागू होने के बाद एक बड़ा बदलाव यह हुआ कि अब मालगुजारी के रूप में नगद रुपयों की अनिवार्यता बना दी गई, जबकि इससे पहले किसान मालगुजारी के रूप में अनाज ही दिया करते थे। यह लेन-देन उनके लिए थोड़ा सुलभ था। इस नई व्यवस्था में किसानों का शोषण और उन पर अत्याचार चरम पर पहुँच गया। चारों तरफ हाहाकार मच गया था। तब के छोटानागपुर(झारखंड) के संथाल किसानों में इस व्यवस्था को लेकर विद्रोह जाग उठा। इन संथाल किसानों ने अंग्रेजों और इनकी मिलीभगत से इन पर अत्याचार कर रहे जमींदारों के खिलाफ मोर्चा खोल दिया। संथाल विद्रोह के बाद छोटा

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

नागपुर के कई हिस्सों में खून-खराबा और हिंसाएँ देखने को मिली। इस आंदोलन को अंग्रेजी सरकार ने बड़ी क्रूरता के साथ दबा दिया। विद्रोह के दमन के लिए अंग्रेजी सरकार ने कत्लेआम किया। गाँव के गाँव जला दिए गए। रमेश कुमार अपने शोध प्रबंध में लिखते हैं-**"संथाल विद्रोह को दबाने में लगभग पंद्रह हजार संथालों का कत्लेआम हुआ।"[1]**

बंगाल का नील विद्रोह (1859-60)-नील की खेती ने भारत के किसानों की दशा में बहुत बड़ा बदलाव किया। नील की खेती की बाध्यता किसानों पर थोप दी गई। नील का इस्तेमाल कपड़ों को रँगने के लिए किया जाता था। भारत में अंग्रेजों ने नील की खेती को व्यापक स्तर पर कड़ाई से लागू करवाया। इस कारण किसान अपने मन की फसल नहीं पैदा कर पा रहे थे। नील की खेती से ऊब कर बंगाल के किसानों ने विद्रोह करना शुरू कर दिया। नील की खेती किसानों के लिए कितनी पीड़ादायक थी, इसकी बानगी हम 'दीनू मंडल' नाम के एक किसान के इस बयान से समझ सकते हैं-**"चाहे मुनाफा हो या घटा. मैं नील की खेती करने से मर जाना अच्छा समझता हूँ। नहीं, मैं किसी भी सूरत में और किसी के लिए भी नील की खेती नहीं कर सकता।"[2]**

यह विद्रोह भी हिंसक था। इसमें कई जमींदारों और पुलिस अधिकारियों के मौत के घाट उतार दिए गए थे। किसानों ने अपने ऊपर हो रहे अत्याचारों से ऊब कर जमींदारों और अंग्रेजी सरकार के खिलाफ खुला मोर्चा खोल दिया। इस विद्रोह में बड़े स्तर पर हिंसा देखने के लिए मिली। पटना जिले के बिसनपुर कोठी में उस वक्त तैनात हवलदार शीभोखान के एक पत्र द्वारा इस विद्रोह की बानगी को समझा जा सकता है-**"सुबह हम लोग तैयार हुए और पीरारी गाँव की ओर बढ़े। हम मुश्किल से रवाना हुए थे कि लाठी, बल्लभ और तीर-कमान से लैस दो हजार आदमियों ने हमें घेर लिया। उन्होंने आगे बढ़कर मैजिस्ट्रेट के घोड़े को बल्लभ मारा। कहा जाता है कि ये दंगाई 52 गाँवों से आए थे, एक आदमी चाल-ढाल से उनका मुखिया मालूम होता था और उसी ओर से कुछ गोलियाँ भी चल रही थीं।"[3]**

इस विद्रोह को भी क्रूरता के साथ दबाया गया, लेकिन इस आंदोलन ने दूरगामी प्रभाव को रेखांकित किया। अंग्रेजी सरकार अब सतर्क हो गई कि किसानों को उकसाने पर एक व्यापक विद्रोह देखा जा सकता है।

मराठा किसान विद्रोह (1875)-1875 ई. में पूना और अहमदनगर के किसानों ने अंग्रेजो के खिलाफ मोर्चा खोल दिया। इस विद्रोह का कारण भी मालगुजारी ही था। फसल अच्छी हो या

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

बुरी, सरकार मालगुजारी लेने के लिए तत्पर थी। जो किसान मालगुजारी नहीं दे पाते थे, उनकी जमीनों की नीलामी कर दी जाती थी। इस व्यवस्था के बाद मराठा के किसानों की हालत दयनीय हो गई। अब उनके सब्र का बांध टूटने लगा था। इन पर दोहरी मार पड़ने लगी थी। किसी भी हालत में मालगुजारी चुकाने के लिए ये महाजनों से कर्ज लेने लगे। किसानों की अज्ञानता और उनके भोलेपन का फायदा उठाकर महाजन इनके साथ सूदखोरी का धंधा करने लग गए थे।

किसानों ने आपस में एकजुटता बनाई और कई साहूकारों का सामाजिक बहिष्कार किया। इससे भी आगे जाकर किसानों ने महाजनों के घरों पर हमला कर सभी कागजात जब्त कर लिया या फिर उन्हें जला दिया। ये विद्रोह धीरे-धीरे बढ़ने ही लगा था। अंग्रेजी सरकार ने इस विद्रोह के दमन के लिए तुरंत कारवाई की। हजारों किसानों को बंदी बना लिया गया।

गाँधी के पहले इन किसान आंदोलनों का मुख्य स्वर सामाजिक था। इन विद्रोहों ने यह दिखा दिया कि इनकी संगठन क्षमता भविष्य में ऐसी परिस्थितियों के लिए तैयार है। सरकार भी अब फूँक-फूँक कर कदम रखने लगी।

1915 में ही भारत की राजनीतिक पटल पर गाँधी का आगमन हो चुका था। बिहार स्थित चंपारण में **'तिनकठिया'** व्यवस्था लागू थी। इसके तहत यहाँ के किसानों को जमीन के 20 भागों में से तीन हिस्से पर नील की खेती करना आवश्यक था। 20वीं सदी के शुरुआत में यूरोप में कृत्रिम नील के आविष्कार हो जाने के बाद नील को बाजार से बाहर कर दिया। भारत में भी इसकी खेती कम होने लगी। पर, इसके बावजूद निलहे इसका फायदा उठाने के लिए आतुर थे। इस संदर्भ में **'कृष्ण मुरारी'** लिखते हैं-**"19वीं सदी के समाप्त होते ही यूरोपीय बाजार में रासायनिक रंगों(डाई) के आगमन ने नील को बाजार से बाहर कर दिया। नील की मांग गिरते ही यूरोपीय बागान मालिक नील की खेती बंद करने को विवश हो गए। भारतीय भी अब नील की खेती नहीं करना चाहते थे। परंतु निलहे इस स्थिति का भी लाभ उठाना चाहते थे। कृषको को नील की खेती बंद करने तथा अनुबंध से मुक्त करने के लिए निलहों ने लगान व अन्य गैर-कानूनी वसूली की दर मनमाने ढंग से बढ़ा दी।"[4]**

चंपारण के किसानों पर ये अत्याचार बढ़ता ही जा रहा था। कई बार मामला मुकदमे तक भी पहुंचा, पर अभी इसका कोई रास्ता नहीं निकल पा रहा था। 1914 में हुए कांग्रेस के बांकीपुर

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

सम्मेलन और 1915 के छपरा सम्मेलन में चंपारण के किसानों का प्रस्ताव पास हो चुका था। बिहार के 'राजकुमार शुक्ल' और 'लोभराज सिंह' गांधी को चंपारण लाने के लिए कलकत्ता गए। इस प्रकार, गाँधी का सर्वप्रथम चंपारण आना हुआ। स्थानीय अंग्रेजी प्रशासन ने गांधी को चंपारण से चले जाने का आदेश दिया, पर गांधी नहीं माने। इसके बाद अंग्रेजी सरकार को गाँधी के आगे झुकना पड़ा, तत्पश्चात चंपारण के किसानों पर हो रहे अत्याचारों को लेकर एक जाँच कमेटी बनाई गई, जिसके सदस्य के रूप में गाँधी को भी चुना गया। अंततः जांच के बाद फैसला किसानों के पक्ष में आया और 'तिनकठिया' व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया। इसके बाद किसानों के साथ ही साथ पूरे भारतीय पटल पर गाँधी के नेतृत्व और उनकी सूझबूझ को स्वीकृति मिली। बिना किसी हिंसा या झड़प के गांधी ने कानूनी लड़ाई लड़ कर किसानों को उनका हक़ दिलाया। गाँधी के चंपारण सत्याग्रह को लेकर ----------लिखते हैं-**"लेकिन होनी होकर रही। वह किसान अपने साथ मोहनदास करमचंद गाँधी को खींचकर चंपारण ले गया। गाँधी के पीछे डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद भी चंपारण पहुंचे। बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद को तो आना ही था। फिर साल 1917 में हिंदुस्तान की जमीन पर पहली दफा सत्याग्रह का प्रयोग हुआ। फिर जो कुछ हुआ वह भारतीय इतिहास का अविस्मरणीय अध्याय है।"[5]**

अवध क्षेत्र भी किसानों के व्यापक आंदोलनों के इतिहास से पटा हुआ है। 1920-22 के दौरान यहाँ हुए किसान आंदोलन उल्लेखनीय है। किसानों का यह विद्रोह भी शोषण और अत्याचार की एक लंबी शृंखला का परिणाम था। अवध में लागू 'अवध रेंट एक्ट' ने यहाँ के किसानों के सब्र का बाँध तोड़ दिया। साथ ही साथ अवध में ताल्लुकेदारी प्रथा के लागू हो जाने से किसानों पर अत्याचार चरम पर पहुँच गया था। भूमिहीनों की संख्या तेजी से बढ़ने लगी थी। स्थानीय किसानों ने शुरुआत में जरूर थोड़ा प्रतिरोध व्यक्त किया, पर इसका कुछ ख़ास फर्क नहीं पड़ा। इसके बावजूद किसानों का असंतोष लगातार बढ़ता गया और कुछ समय बाद यह एक बड़े विद्रोह के रूप में बदल गया। 6 और 7 जनवरी, 1921 को रायबरेली के एक या दो जगहों पर किसानों की आम सभा बुलाई गई। अंग्रेजी सरकार को इसकी भनक लग गई। किसानों के इस विशाल जनसभा पर पुलिस के द्वारा गोलियाँ बरसाई गई। इसके बाद और भी कई जगहों पर गुस्साए किसानों का भू-स्वामियों और पुलिस के साथ झड़प हुई। कई जगह खून-खराबा भी देखने को मिला। किसान दोहरी मार झेल रहे थे, इसलिए उनका गुस्सा अब सातवें आसमान पर था। 'कपिल कुमार' अवध में हो रहे किसानों पर जुल्म को लेकर लिखते हैं-**"कमर तोड़ लगान से दुहरे**

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

The Sameeksha Global: A Multidisciplinary Journal in Hindi
Vol. 4, Issue 1 – 2020
ISSN: 2581-401X

हुए जा रहे इन कास्तकारों को जिनके सर पर बेदखली की तलवार हमेशा लटकी रहती थी, अब 'लड़ाई चंदा' और 'भरती चंदा' की जबरन वसूली और सेना में जबरन भर्ती का शिकार होना पड़ रहा था। किसान नजराना और मनमाने करों की गैरकानूनी जबरन वसूली की दमन चक्की में पिस रहे थे।"[6] इस पृष्ठभूमि के साथ अवध में 1919 से ही छिटपुट विद्रोह शुरू हो गए थे जिसने धीरे-धीरे एक व्यापक आंदोलन का रूप धारण कर लिया था।

अवध में हो रहे इस किसान आंदोलन का नेतृत्व कर रहे थे-**'बाबा रामचंद्र'**। ये बड़े ही विलक्षण प्रतिभा के व्यक्ति थे। अवध की जनता के बीच इनकी अच्छी पैठ थी। पुलिस ने बाबा रामचंद्र को एक चोरी के मुकदमे में जेल में बंद कर दिया। अदालत में सुनवाई के दौरान हजारों हजार की संख्या में किसान अदालत के बाहर इकट्ठा हो गए। इसके बाद अदालत को जेल में भी गुप्त रूप से सुनवाई करवानी पड़ी। विद्रोही किसानों की भीड़ जेल के बाहर इकट्ठा हो गई। दरअसल इनके बीच यह खबर फैल गई थी कि गाँधी खुद आकर इन्हें जेल से छुड़ाने वाले हैं। इस समय गाँधी आम जनता के बीच एक बड़े नेता के तौर पर उभर चुके थे। एक अंग्रेज़ अधिकारी की गाँधी की इस प्रसिद्धी के संदर्भ में रिपोर्ट है-**"दूर-दराज के गाँवों तक गांधी के नाम का सिक्का जिस तरफ चल पड़ा है, उसे देखकर चकित रह पड़ता है। कोई नहीं जानता की वह कौन है, या क्या है? फिर भी यह मानी हुई बात है कि उनके हर आदेश का पाला होगा। यह एक महात्मा साधु है, एक पंडित है, इलाहाबाद में रहने वाले ब्राह्मण हैं, यहाँ तक कि देवता हैं। किसी के लिए वे एक बनिया हैं, जो तीन आने गज पर कपड़ा बेचते हैं। उसे शायद किसी ने गाँधी की दुकान (नया स्वदेशी भंडार) के बारे में बताया है; जो अधिक बुद्धिमान हैं। वे कहते हैं कि गाँधी जी देश की भलाई के लिए काम कर रहे हैं। लेकिन उनके असली नाम की ताकत तो इस धारणा में छुपी हुई है कि यह गांधी है जिसने प्रतापगढ़ में बेदखली रुकवा दी है।"[7]**

गाँधी की अनुपस्थिति भी यहाँ एक जनप्रेरणा का काम कर रही थी। इससे अवध के किसान आंदोलनों को काफी बल मिला। गांधी 8 फरवरी, 1921 को गोरखपुर आए थे और एक सभा को संबोधित करते हुए लोगों से अपने हक़ के लिए आगे आने की बात कही।

1928 ईस्वी में हुए गुजरात के खेड़ा के किसानों के आंदोलन में भी गांधी की सहभागिता उल्लेखनीय है। इस आंदोलन ने गुजरात में गाँधीवाद का बीज डालने का काम किया। गौरतलब है कि चंपारण सत्याग्रह के बाद देशभर में गांधी की प्रसिद्धि हो चुकी थी। चंपारण सत्याग्रह के समय से ही गुजरात से किसानों के प्रतिनिधि गांधी को यहाँ आने का अनुरोध कर रहे थे। खेड़ा

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.

के किसानों का भी मामला मालगुजारी देने से संबंधित था। गाँधी के शुरुआती हस्तक्षेप के बाद भी अंग्रेजी सरकार मालगुजारी वसूलने के अपने फैसले पर अड़ी रही। सरकार के इस रवैये से गांधी भी क्षुब्ध हुए थे-**"अधिकारियों का उस समय का ढंग आज तो हास्यास्पद जान पड़ता है। उनका उन दिनों का तुच्छता भरा बर्ताव आज भी नामुमकिन सा लगता है।"[8]** गाँधी ने इसके बाद सत्याग्रह करने की ठान ली। अंततः कुछ समय बाद सरकार को एक तीसरे विकल्प के साथ आना पड़ा।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि भारत में हो रहे किसान आंदोलनों का स्वरूप ही बदल दिया। इसके साथ ही हम यह कह सकते हैं कि किसानों के मुद्दों के साथ खड़े होकर गाँधी ने देश के सामने यह संदेश दिया कि देश की उन्नति के लिए किसानों का खुश रहना कितना आवश्यक है। गांधी को जिस सत्याग्रह के लिए जाना जाता है, उसकी वास्तविक नींव इन किसान आंदोलनों में ही स्थापित की गई।

संदर्भ सूची

1. मिश्र, राकेश कुमार. किसान आंदोलन और गाँधी जी. वर्धा: महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय. शोधगंगा से, २०१५. पृष्ठ-४०.
2. नटराजन, एल. भारत के किसान विद्रोह. दिल्ली: वाणी प्रकाशन, २०१४. पृष्ठ-३५.
3. नटराजन, एल. बंगाल में नील की खेती, पार्लियामेंट के कागजात से उद्धृत.
4. मुरारी, कृष्णा. “जनजातीय तथा मजदूर आंदोलन”. राष्ट्रवाद का भारतनामा से. अभय प्रसाद सिंह द्वारा सम्पादित. हैदराबाद: ओरियंट ब्लैकस्वॉन, प्रथम संस्करण २०१७. पृष्ठ-२२४.
5. पुष्यमित्र, जब नील का दाग मिटा: चम्पारण १९१७. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण-२०१७. पृष्ठ-२४.
6. कुमार, कपिल. किसान विद्रोह, कांग्रेस और अंग्रेजी राज. दिल्ली: मनोहर पब्लिकेशन, १९९१. पृष्ठ-८१.
7. पांडेय, ज्ञानेंद्र. "किसान आंदोलन और भारतीय राष्ट्रवाद". निम्नवर्गीय प्रसंग २ से. दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, २००२. पृष्ठ-१३२.
8. गाँधी. सत्य के प्रयोग, खेड़ा प्रसंग. दिल्ली: राजपाल एन्ड सन्स, २०१८. पृष्ठ-९८.

© Eureka Journals 2020. All Rights Reserved.